रजिस्ट्री सं. डी.एल.-33004/94

REGD. NO. D.L.-33004/94

भारत का राजपत्र
The Gazette of India

असाधारण
EXTRAORDINARY

भाग II—खण्ड 3—उप-खण्ड (ii)
PART II—Section 3—Sub-Section (ii)

प्राधिकार से प्रकाशित
PUBLISHED BY AUTHORITY

सं. 292] नई दिल्ली, शुक्रवार, जून 10, 1994/ज्यैष्ठ 20, 1916
No. 292] NEW DELHI, FRIDAY, JUNE 10, 1994/JYAISTHA 20, 1916

विधि, न्याय और कम्पनी कार्य मंत्रालय

(विधायी विभाग)

नई दिल्ली, 10 जून, 1994

अधिसूचना

का. आ. 441 (अ):—राष्ट्रपति द्वारा किया गया निम्नलिखित आदेश सर्वसाधारण की जानकारी के लिए प्रकाशित किया जाता है :—

आदेश

महाराष्ट्र राज्य में अप्रैल-जून, 1991 में हुए साधारण निर्वाचन में 39-अहमदनगर संसदीय निर्वाचन क्षेत्र से श्री गडख यशवंतराव कंकरराव (जिसे इसमें इसके पश्चात् "निर्वाचित अभ्यर्थी" कहा गया है) के निर्वाचन को मुंबई उच्च न्यायालय (औरंगाबाद न्यायपीठ) द्वारा 30 मार्च, 1993 को, निर्वाचित अभ्यर्थी द्वारा लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "उक्त अधिनियम" कहा गया है) की धारा 123 के खण्ड (4) में विनिर्दिष्ट भ्रष्ट आचरण किए जाने के आधार पर अपास्त कर दिया गया था;

निर्वाचित अभ्यर्थी द्वारा उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की गई थी और उस न्यायालय द्वारा उच्च न्यायालय के तारीख 30 मार्च, 1993 के आदेश पर एक सशर्त रोक लगाने के लिए 14-5-93 को एक अन्तरिम आदेश मंजूर किया गया ;

और उच्चतम न्यायालय ने उक्त अधिनियम की धारा 123 के खण्ड (4) के अधीन भ्रष्ट आचरण करने के कारण श्री गडख के निर्वाचन को अपास्त करने वाले उच्च न्यायालय के आदेश को कायम रखते हुए तारीख 19 नवम्बर, 1993 को अपील खारिज कर दी;

और राष्ट्रपति ने, उक्त अधिनियम की धारा 8क की उपधारा (3) के अनुसरण में इस प्रश्न पर निर्वाचन आयोग की राय मांगी है कि क्या उस धारा की उपधारा (1) के अधीन निर्वाचित अभ्यर्थी को निरर्हित किया जाए और यदि किया जाए तो कितनी अवधि के लिए;

और निर्वाचन आयोग ने अपनी राय (उपाबंध देखिए) दी है कि निर्वाचित अभ्यर्थी को ऊपर उल्लिखित किए गए भ्रष्ट आचरण के कारण तारीख 19 नवम्बर, 1993 से अर्थात् उच्चतम न्यायालय के आदेश की तारीख से संगणित

की जाने वाली चार वर्ष की अवधि के लिए निरर्हित किया जाना चाहिए ;

अतः मैं, शंकर दयाल शर्मा, भारत का राष्ट्रपति, उक्त अधिनियम की धारा 8क की उपधारा (3) के अधीन मुझे प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए, निर्वाचित अभ्यर्थी को तारीख 19 नवम्बर, 1993 से चार वर्ष की अवधि के लिए निरर्हित किए जाने का विनिश्चय करता हूं ।

स्थान :—नई दिल्ली
दिनांक 8 जून, 1994

शंकर दयाल शर्मा
भारत का राष्ट्रपति

उपाबंध

भारत निर्वाचन आयोग

भारत निर्वाचन आयोग के समक्ष

1994 का निर्देश मामला संख्यांक 1 (लो प्र अ)
(लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8क (3) के अधीन भारत के राष्ट्रपति की ओर से निर्देश)

श्री गडख यशवंतराव कंकरराव की निरर्हता के मामले में

राय

1. यह भारत के राष्ट्रपति की ओर से लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 (जिसे इसमें इसके पश्चात् 1951 का अधिनियम कहा गया है) की धारा 8क की (3) के अधीन एक निर्देश है जिसमें निर्वाचन आयोग की इस प्रश्न पर राय मांगी गई है कि क्या श्री गडख यशवंतराव कंकरराव को उक्त अधिनियम की धारा 8क (1) के अधीन निरर्हित किया जाना चाहिए और यदि ऐसा है तो कितनी अवधि के लिए ।

2. संक्षेप में सुसंगत तथ्य निम्नलिखित रूप में हैं :—

(i) श्री गडख यशवंतराव कंकरराव अप्रैल जून, 1991 में आयोजित साधारण निर्वाचन में महाराष्ट्र राज्य के 39 अहमदनगर संसदीय निर्वाचन क्षेत्र से लोक सभा के लिए निर्वाचित हुए थे । उसके निर्वाचन को एक विरोधी अभ्यर्थी श्री ई. वी. बालासाहेब विखे पाटिल द्वारा 1991 के निर्वाचन पिटीशन सं. 2 में मुंबई उच्च न्यायालय (औरंगाबाद न्यायपीठ) के समक्ष प्रश्नगत किया गया । उच्च न्यायालय ने उक्त निर्वाचन पिटीशन में तारीख 30 मार्च, 1993 के निर्णय और आदेश द्वारा श्री गडख का निर्वाचन, 1951 के अधिनियम की धारा 123(4) के अधीन उन्हें भ्रष्ट आचरण का दोषी पाए जाने पर शून्य घोषित कर दिया । श्री गडख ने उच्च न्यायालय के तारीख 30 मार्च, 1993 के उक्त निर्णय और आदेश के विरुद्ध उच्चतम न्यायालय के समक्ष 1993 की सिविल अपील सं. 2115 फाइल की । उच्चतम न्यायालय ने तारीख 14-5-1993 के अंतरिम आदेश द्वारा ऊपर वर्णित अपील के निपटारे के लम्बित रहने तक तारीख 30 मार्च, 1993 के उच्च न्यायालय के आक्षेपित आदेश पर सशर्त रोक मंजूर कर दी है । अंततः उच्चतम न्यायालय ने 19 नवम्बर, 1993 को यह अपील उच्च न्यायालय के उस आदेश को स्वीकार करते हुए खारिज कर दी जिसमें श्री गडख को निर्वाचन की, 1951 के अधिनियम की धारा 123(4) के अधीन भ्रष्ट आचरण करने के कारण अपास्त किया गया था ।

(ii) मुम्बई उच्च न्यायालय ने श्री गडख को उनके भ्रष्ट आचरण के लिए दोषी पाया था, उनमें से सभी 1951 के अधिनियम की उक्त धारा 123(4) के अधीन आते थे । तथापि, उच्चतम न्यायालय ने उसे केवल एक आधार पर ही दोषी पाया अर्थात् यह कि श्री गडख ने 30-4-1991 को सानाई में हुए एक अधिवेशन में और 10-5-1991 को एक व्यक्ति श्री गिरीश कुलकर्णी को दिए गए साक्षात्कार में, जो 13-5-1991 को महाराष्ट्र टाइम्स में प्रकाशित हुआ था, यह कहा था कि श्री विखे पाटिल ने जो कि निर्वाचन पिटीशन में पिटीशनर हैं) 20 लाख रुपए की राशि जनता दल के अभ्यर्थी श्री वी. जी. कोलसे पाटिल को, अहमदनगर संसदीय निर्वाचन क्षेत्र से बीड संसदीय निर्वाचन क्षेत्र में चले जाने के लिए दी थी । उच्चतम न्यायालय ने श्री गडख के इस कथन को तथ्यात्मक कथन माना जो मिथ्या था और जो श्री विखे पाटिल के व्यक्तिगत चरित्र या आचरण के संबंध में श्री गडख द्वारा या तो मिथ्या विश्वास किया गया था या सत्य के रूप में विश्वास नहीं किया गया था एक ऐसा कथन था जो 1951 के अधिनियम की धारा 123(4) के अर्थान्तर्गत उस अभ्यर्थी के निर्वाचन की संभावनाओं पर युक्तियुक्त रूप से प्रतिकूल प्रभाव डाल सकता था ।

3. अपनी राय बनाने और देने से पूर्व, आयोग ने श्री गडख को सुनवाई का अवसर देने का विनिश्चय किया । तदनुसार उनकी 10-5-1994 को उनके विद्वान वरिष्ठ काउंसेल, श्री अशोक देसाई के माध्यम से सुनवाई की गई। उन्होंने 25 अप्रैल, 1994 को एक लिखित कथन भी फाइल किया ।

4. श्री देसाई ने 10-5-1994 को आयोग के समक्ष अपनी मौखिक दलीलों में उचित रूप से स्वीकार किया है कि श्री गडख द्वारा भ्रष्ट आचरण करने के संबंध में उच्चतम न्यायालय के निष्कर्ष आबद्धकर हैं और यह कि आयोग वर्तमान कार्यवाही में उन पर विचार नहीं कर सकता ।

5. श्री देसाई की बात मानते हुए, यही विधि की सही स्थिति है । आयोग ने निरंतर यह मत अपनाया है कि उच्चतम न्यायालय के निष्कर्षों का वर्तमान कार्यवाहियों में खंडन नहीं किया जा सकता क्योंकि ऐसा करना उच्चतम न्यायालय के निष्कर्षों पर निर्णय देने की कोटि में आएगा । यह आदेश कि न्याय प्रणाली का उपहास होगा । यदि आयोग निर्वाचन पिटीशनों तथा निर्वाचन अपीलों में न्यायालयों के निष्कर्षों के पुनर्विलोकन की शक्तियां स्वयं धारण कर ले ।

6. अतः वर्तमान कार्यवाहियों में आयोग से केवल दो प्रश्नों पर अपनी राय देने की अपेक्षा की गई है, अर्थात् (i) क्या श्री गडख को जो ऊपर वर्णित भ्रष्ट आचरण का दोषी पाया गया है, निरर्हित किया जाना चाहिए,

(ii) यदि ऐसा है तो कितनी अवधि के लिए । यह अवधि उस तारीख से जिसको उच्चतम न्यायालय का आदेश प्रभावी हुआ है अर्थात् 19-11-1993 से छह वर्ष से अधिक नहीं हो सकती ।

7. उपरोक्त दोनों प्रश्नों पर विचार करते हुए, आयोग का कार्य किए गए भ्रष्ट आचरण की प्रकृति और गहनता पर विचार करने तक और यह देखने तक सीमित है कि क्या कोई परिणमनकारी और कम करने वाली परिस्थितियां हैं जो एक सीमा तक में कोई भी निरर्हता अधिरोपित न करना न्याय-संगत ठहरा सकती है अथवा 1951 के अधिनियम की धारा 8(1) के परंतुक के अधीन यथा अनुज्ञेय छह वर्ष की अधिकतम अवधि से कम अवधि के लिए निरर्हता अधिरोपित करना न्यायसंगत ठहरा सकता है ।

8. श्री अशोक देसाई ने दलील दी कि वर्तमान कार्यवाहियों में आयोग के लिए इस बात पर विचार करना अनुज्ञेय है कि क्या उपलभ्य साक्ष्य के आधार पर दो निष्कर्ष संभव हैं और अपील न्यायालय उस निष्कर्ष से भिन्न निष्कर्ष निकाल सकता था जो उसने निकाला और यह कि यदि ऐसे विचार पर आयोग का यह निष्कर्ष है कि रोगी ऐसी संभावना संभाव्य है तो उपरोक्त दोनों प्रश्नों का विनिश्चय करने के लिए यह कमी करने वाले तथ्य होंगे । अपनी उपरोक्त दलील के समर्थन में उन्होंने इलेक्शन ला रिपोर्ट, जिल्द 58, पृ. 240 में रिपोर्टित अमरनाथ चावला के मामले में निर्वाचन आयोग द्वारा दी गई राय में आयोग के कतिपय मदों का अवलंब लिया है ।

9. मुझे यह दलील एकदम अस्वीकार करने में कोई संकोच नहीं है । श्री देसाई ने स्वयं स्वीकार किया है और ऐसा उचित रूप से किया है कि उच्चतम न्यायालय के निष्कर्ष सभी प्राधिकारियों पर, जिसके अन्तर्गत वर्तमान कार्यवाहियों में आयोग भी है, आबद्धकर है । अतः आयोग को कोई कल्पना या अटकल इस बारे में लगाने की छूट नहीं है कि क्या उच्चतम न्यायालय द्वारा उसे उपलभ्य किए गए साक्ष्य पर कोई भिन्न निष्कर्ष निकाला जा सकता था । अमरनाथ चावला के मामले में लिये गए अवलंब भी अनुचित है । उस मामले में श्री चावला पहले से ही पूरी छह वर्ष की अवधि के लिए निरर्हित थे और आयोग ऐसी निरर्हता की अवधि को हटाने या कम करने के आवेदन पर विचार कर रहा था । अतः श्री देसाई द्वारा दी गई उन दलीलों का उल्लेख करना आवश्यक नहीं है जो उन्होंने आयोग को यह विश्वास दिलाने के प्रयास में दी है कि उच्चतम न्यायालय के अपने निष्कर्षों में, विशेष रूप से इस प्रश्न पर कि क्या श्री गडख ने जो कथन किया था उसके बारे में उन्होंने विश्वास किया था कि वह सत्य है, उच्चतम न्यायालय द्वारा भिन्न निष्कर्ष निकाला जा सकता था । उच्चतम न्यायालय ने श्री देसाई द्वारा, जो अपील कार्यवाहियों में भी श्री गडख की ओर से उपसंजात हुए थे, किए गए उस आशय के निवेदनों को विलक्षण तर्कों किन्तु प्रामकता से ग्रस्त होने के रूप में नामंजूर कर दिया है ।

10. आगे श्री देसाई ने निवेदन किया कि श्री गडख के पक्ष में एक कम करने वाली तीन परिस्थितियां हैं, अर्थात् (i) यह भ्रष्ट आचरण, जिसके लिए श्री गडख को दोषी पाया गया है, ऐसी गंभीर प्रकृति का नहीं है जिसमें कठोर या मध्योपराधी दंड की अपेक्षा की जाए, (ii) श्री गडख ने अपनी गलती के लिए पहले ही पर्याप्त रूप से हानि उठाई है, क्योंकि उनका लोक सभा के सदस्य के रूप में निर्वाचन अपास्त कर दिया गया है, और (iii) श्री गडख के पास विशिष्ट राजनीतिक वृत्ति है और यदि उनकी वृत्ति की अचानक समाप्त कर दिया जाता है या उनके राजनीतिक जीवन में किसी भी विस्तार तक भंग करके व्यवधान डाला जाता है तो वह बहुत ही अप्रिय होगा । अतः उन्होंने यह आग्रह किया कि श्री गडख पर कोई भी निरर्हता अधिरोपित न की जाए और यदि कोई निरर्हता किसी भी दशा में अधिरोपित की जाती है तो वह बहुत ही कम होनी चाहिए ।

11. श्री देसाई ने निवेदन किया कि मुम्बई उच्च न्यायालय ने श्री गडख को सात विषयों के संबंध में भ्रष्ट आचरण का दोषी पाया था किन्तु अपील में उच्चतम न्यायालय ने अंततः केवल एक विषय के संबंध में उन्हें दोषी पाया अर्थात श्री गडख ने तथ्य का मिथ्या कथन किया कि श्री भी विखे पाटिल ने श्री वी. जी. कोलसे पाटिल को अहमदनगर संसदीय निर्वाचनक्षेत्र से अपनी अभ्यर्थिता वापस लेने और बीड संसदीय निर्वाचनक्षेत्र में जाने के लिए बीस लाख रुपए का संदाय किया था । देसाई के अनुसार यह कथन श्री गडख द्वारा निर्वाचन प्रचार के दौहल्ला में किया गया था और राजनीतिक विरोधियों की प्रतिकूल आलोचना के लिए छूट दी जानी चाहिए यद्यपि उसे कड़ी भाषा में व्यक्त किया गया था । अपनी अपयुंक्त प्रतिपादना के लिए उन्होंने कल्तार सिंह बनाम मुख्तियार सिंह [1964 (7) एस सी आर 790], एम. जे. जखरिया सम्यत बनाम टी. एच. मोहम्मद और अन्य [1990 (3) एस सी सी (396)] ललित किशोर बनाम जगदीश प्रसाद ठाडा [1990 (अनुपूरक) एस सी सी 248], रामचंद बनाम हरदयाल [1986 (1) एस सी आर 177] देव कान्ता बरूआ बनाम गोलक चंद बरूआ और अन्य [ए आई आर 1970 एस सी 1231] और जगदेव सिंह बनाम प्रताप सिंह [1964(6) एस सी आर 750] के मामलों में उच्चतम न्यायालय के विनिश्चयों पर निर्भर किया ।

12. उपर्युक्त निवेदन नामंजूर किए जाने के लिए ही किया गया है । राजनीतिक विरोधियों की ऐसी प्रतिकूल

आलोचना के बारे में आक्षेप नहीं किया जा सकता और प्रत्येक मामले में शास्ति नहीं दी जा सकती जब तक कि यह शिष्टता की सीमा का अतिक्रमण और विधि की किसी विशिष्ट उपबंध का उल्लंघन नहीं करती। किन्तु, राजनीतिक विरोधियों का चरित्र हनन पूर्णतः एक अलग मामला है। चरित्र हनन के किसी भी प्रयत्न को अवश्य निरस्कृत किया जाना चाहिए और कड़ाई से दबा देना चाहिए। वर्तमान मामले में, श्री गड़ख द्वारा किया गया मिथ्या कथन उनके राजनीतिक विरोधी, श्री विखे पाटिल की प्रतिकूल आलोचना नहीं है बल्कि यह उनके चरित्र हनन की कोटि में है। श्री गड़ख ने जो कथन किया है, यदि उसका उचित रूप से यह विश्लेषण किया जाए तो, यह है कि श्री विखे पाटिल ने अहमदनगर संसदीय निर्वाचनक्षेत्र से अपने निर्वाचन की संभाव्यता को अग्रसर करने के लिए उस निर्वाचनक्षेत्र से श्री बी. जी. कोल्से पाटिल की अभ्यर्थिता वापस लेने को सुनिश्चित करने के लिए बीस लाख रुपए का अवैध परितोषण दिया। केवल यही नहीं, उन्होंने उसी कथन से, आवश्यक विवक्षा द्वारा, श्री बी. जी. कोल्से पाटिल के व्यक्ति के रूप में चरित्र पर आक्रमण किया कि उन्होंने श्री विखे पाटिल के पक्ष में निर्वाचन लड़ने से अभ्यर्थिता वापस लेने के लिए श्री विखे पाटिल से अवैध परितोषण प्राप्त किया या स्वीकार किया। यदि निर्वाचन प्रक्रिया की शुद्धता को बनाए रखना है और उसे दूषित होने से बचाया जाना है तो अभ्यर्थियों की ओर से ऐसे कार्यों को निर्वाचन प्रचार के तथाकथित "होहल्ला" में भी प्रोत्साहित नहीं किया जा सकता और न ही किया जाना चाहिए।

13. श्री देसाई ने उच्चतम न्यायालय के जिन उपर्युक्त निर्दिष्ट विनिश्चयों पर निर्भर किया है वे भी उनके द्वारा पक्षपोषित मामले का समर्थन नहीं करते। उन सभी मामलों में, उच्चतम न्यायालय ने जिस विषय पर विचार किया था वह यह है कि यथाअभिकथित भ्रष्ट आचरण निर्वाचित अभ्यर्थी द्वारा किया गया है या नहीं। वर्तमान मामले में उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट रूप से यह अभिनिर्धारित कि है कि श्री गड़ख भ्रष्ट आचरण के दोषी हैं।

14. उपर्युक्त को ध्यान में रखते हुए, मैं श्री देसाई के निवेदन से सहमत होने में असमर्थ हूं कि श्री गड़ख निरर्हित न किया जाए। उनके निर्वाचन को शून्य के रूप में घोषणा को पर्याप्त और उनके द्वारा किए गए अन्याय के लिए यथोचित दंड नहीं माना जा सकता। उन्हें इस संबंध में निरर्हित किया जाना चाहिए, उस पर कोई विवाद नहीं हो सकता।

15. विवादस्पद प्रश्न यह है कि श्री गड़ख को इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में कितनी अपधि तक निरर्हित किया जाना चाहिए।

16. श्री देसाई ने यह निवेदन किया था कि यदि कोई निरर्हता श्री गड़ख पर अधिरोपित की जानी है तो वह उनके द्वारा किए गए भ्रष्ट आचरण की गंभीरता को ध्यान में रखते हुए कम से कम होनी चाहिए। उनका निवेदन था कि 1951 के अधिनियम की धारा 123 के अंतर्गत भ्रष्ट आचरणों के समस्त विषय हैं, जिनमें से कुछ, अर्थात् वे हैं जो अपील से संबंधित उपधारा (3) और उपधारा (3क) में हैं परिभाषित या धर्म के आधार पर असामंजस्य फैलाना, आदि प्रकृति में अन्य से अर्थात् उपधारा (4) के अधीन वर्तमान भ्रष्ट है बहुत अधिक गंभीर और जघन्य है और धारा 123 के अधीन भ्रष्ट आचरण के सभी मामलों को दंड की मात्रा अवधारित करते समय एक समान नहीं समझना चाहिए। उन्होंने उच्चतम न्यायालय द्वारा रंजीत ठाकुर बनाम भारत का संघ [1981 (4) एस सी सी 611] और भूतपूर्व नायक सरदार सिंह बनाम भारत का संघ तथा अन्य [ए आई आर 1992 ए सी 417] के मामले में प्रतिपादित अनुपातिकता के सिद्धान्त पर निर्भर किया।

17. इस संबंध में दो राय नहीं हो सकती कि किसी अपराध के लिए अधिरोपित दंड अपराध की गंभीरता के अनुरूप होना चाहिए। वह न तो अत्यधिक रूप से कठोर और इतने अनुपात में होना चाहिए कि वह मनमाना और प्रतिशोधात्मक प्रतीत हो और न ही वह इतना न्यूनतम होना चाहिए कि दंड अधिरोपित करने का उद्देश्य ही विफल या व्यर्थ हो जाए। रणजीत ठाकुर वाले मामले (उपर्युक्त) में उच्चतम न्यायालय के शब्दों में दण्डादेश अपराध और अपराधी के अनुरूप होना चाहिए।

18. श्री गड़ख द्वारा कारित भ्रष्ट आचरण की प्रकृति और गंभीरता और उसके पिछले राजनैतिक जीवन को सम्यक् रूप से ध्यान में रखते हुए, मेरी यह सुनिश्चित राय है कि श्री गड़ख कुछ उदार दृष्टिकोण अपनाए जाने का पात्र है और उसे अधिकतम दंड अर्थात् 1951 के अधिनियम की धारा 8(1) के परन्तुक के अधीन परिकल्पित छह वर्ष के लिए निर्हरता से दंडित न किया जाए। न्याय के उद्देश्यों को पूर्णतः पूर्ति हो जाएगी यदि उसे 19 नवम्बर 1993 से, अर्थात् उच्चतम न्यायालय के उस आदेश की तारीख से, जिसके द्वारा यह निष्कर्ष निकाला गया था कि वह भ्रष्ट आचरण का दोषी है और मुम्बई उच्च न्यायालय के तारीख 30-3-1993 वाले निर्णय और आदेश के विरुद्ध उसके द्वारा पहले मंजूर किया गया रोकादेश रद्द कर दिया था, चार वर्ष की अवधि के लिए निरर्हित किया जाता है।

19. तदनुसार, निर्वाचन आयोग यह विनिश्चय करता है और राष्ट्रपति को लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8(3) के अधीन अपनी यह राय देता है कि श्री गड़ख यशवंतराव कंकरराव को उच्चतम न्यायालय के आदेश की तारीख अर्थात् 19-11-1993 से चार वर्ष की अवधि के लिए संसद के किसी सदन या राज्य की

विधान सभा या विधान परिषद का सदस्य चुने जाने और सदस्य होने के लिए निरर्हित किया जाना चाहिए।

टी. एन. शेषन
भारत के मुख्य निर्वाचन आयुक्त
और अध्यक्ष, भारत निर्वाचन आयोग

नई दिल्ली, तारीख 16 मई 1994

[फा. सं. 7/28/94-वि.-2]
पी. एल. सकरवाल, संयुक्त सचिव

MINISTRY OF LAW, JUSTICE AND COMPANY AFFAIRS

(Legislative Department)

NOTIFICATION

New Delhi, the 10th June, 1994

S.O. 441(E).—The following order made by the President is published for general information.

ORDER

Whereas the election of Shri Gadakh Yashwantrao Kankarrao (hereinafter referred to as the 'returned candidate'), from 39 Ahmednagar Parliamentary Constituency in the State of Maharashtra at the general election held in April-June, 1991, was set aside by the High Court of Bombay (Aurangabad Bench) on 30th March, 1993 on the ground of commission by the returned candidate of the corrupt practice specified in clause (4) of section 123 of the Representation of the People Act, 1951 (hereinafter referred to as "the said Act");

Whereas an appeal was filed by the returned candidate before the Supreme Court and that Court by an interim order dated 14-5-93 granted a conditional stay of the High Courts order on 30th March, 1993 ;

And whereas the Supreme Court dismissed the appeal on 19th November, 1993 upholding the order of the High Court setting aside the election of Shri Gadakh for having committed corrupt practice under clause (4) of section 123 of the said Act ;

And whereas the President has sought the opinion of the Election Commission in pursuance of sub-section (3) of section 8A of the said Act, on the question whether the returned candidate should be disqualified under sub-section (1) of that if section and so, for what period :

And whereas the Election Commission has given its opinion (vide Annexure) that the returned candidate should be disqualified for having committed the corrupt practice mentioned above, for a period of four years to be reckoned from 19th November, 1993, i. e. the date of the order of the Supreme Court ;

Now, therefore, I, Shanker Dayal Sharma, President of India, in exercise of the powers conferred on me under sub-section (3) of section 8A of the said Act, do hereby decide that the returned cadidate should be disqualified for a period of four years from 19th November, 1993.

Place : NEW DELHI

Date:—8TH JUNE, 1994.

S. D. SHARMA
PRESIDENT OF INDIA

ANNEXURE

BEFORE THE ELECTION COMMISSION OF INDIA

REFERENCE CASE NO. 1 (RPA) OF 1994

[REFERENCE FROM THE PRESIDENT OF INDIA UNDER SECTION 8A(3) OF THE REPRESENTATION OF THE PEOPLE ACT, 1951]

IN RE : Disqualification of Shri Gadakh Yashwantrao Kankarrao.

OPINION

1. This is a reference from the President of India under Section 8A(3) of the Representation of the People Act, 1951 (hereinafter referred to as '1951-Act') seeking the opinion of the Election Commission on the question as to whether Shri Gadakh Yashwantrao Kankarrao should be disqualified and, if so, for what period under Section 8A(1) of the said Act.

2. The relevant facts, in brief, are as follows:—

(i) Shri Gadakh Yashwantrao Kankarrao was elected to the House of the People from 39-Ahmednagar Parliamentary Constituency in the State of Maharashtra at the general election held in April-June, 1991. His election was called in question by one of the rival candidates Shri E.V. @ Balasaheb Vikhe Patil before the High Court of Bombay (Aurangabad Bench) in election petition No. 2 of 1991. The High Court, by judgment and order dated 30th March, 1993 in the said election petition, declared the election of Shri Gadakh as void having found his guilty of corrupt practices under Section 123(4) of the 1951-Act. Shri Gadakh filed an appeal bearing Civil Appeal No. 2115 of 1993 before the Supreme Court against the said judgment and order dated 30th March, 1933 of the High Court. The Supreme Court, by an interim order dated 14-5-1993, granted a conditional stay of the High Court's impugned order dated 30th March, 1993

pending disposal of the appeal abovementioned. Ultimately, the Supreme Court dismissed the appeal on 19th November, 1993 upholding the order of the High Court setting aside the election of Shri Gadakh for having committed corrupt practice under Section 123(4) of 1951-Act.

(ii) The High Court of Bombay had found Shri Gadakh guilty of several corrupt practices, of them all falling under the said Section 123(4) of the 1951-Act. The Supreme Court has, however, found him guilty only on one count, namely, that Shri Gadakh said in a meeting at Sonai on 30-04-1991 and in the interview given to one Shri Girish Kulkarni on 10-05-1991 which was published in the Maharashtra Times on 13-05-1991 that a sum of Rs. 20 lakhs was paid by Shri Vikhe Patil (petitioner in the election petition) to the Janata Dal candidate. Shri B. G. Kolse Patil for shifting from Ahmednagar Parliamentary constituency to Beed Parliamentary constituency. The Supreme Court held this statement of Shri Gadakh to be a statement of fact which was false, and which was either believed to be false or was not believed to be true by Shri Gadakh, in relation to the personal character or conduct of Shri Vikhe Patil, being a statement reasonably calculated to prejudice the prospects of that candidate's election within the meaning of Section 123(4) of the 1951-Act.

3. Before formulating and tendering its opinion, the Commission decicled to afford Shri Gadakh an opportunity of being heard. Accordingly, he was heard on 10-5-1994 through his learned Senior Counsel, Shri Ashok Desai. He also filed a written statement on 25-4-1994.

4. Shri Desai in his oral submissions before the Commission on 10-5-1994 fairly conceded that the findings of the Supreme Court in relation to the commission of corrupt practice by Shri Gadakh are binding and that the Commission in the present proceedings could not go behind the same.

5. In fairness to Shri Desai, that is the correct position in law. The Commission has consistently taken the view that the findings of the Supreme Court cannot be assailed in the present proceedings as that would amount to sitting in judgment over the findings of the Apex Court. It would be a travesty of the judicial system in the country if the Commission were to arrogate to itself the powers of review of the findings of the Courts in the election petitions and election appeals.

6. The Commission, in the present proceedings, is, therefore, called upon to tender its opinion only on two questions, namely, (i) whether Shri Gadakh found guilty of the corrupt practice mentioned above should be disqualified, (ii) if so, for what period. Such period cannot exceed six years from the date on which the order of the Supreme Court takes effect, i.e., 19-11-1993.

7. While considering the above two questions, the Commission's function is limited to look into the nature and gravity of the corrupt practice committed and wheher there is any extenuating and mitigating circumstances which may justify either the imposition of no disqualification at all, as one extreme, or the imposition of disqualification for a period lesser than the maximum period of six years as permissible under the proviso to section 8(1) of the 1951-Act.

8. Shri Ashok Desai contended that it is permissible for the Commission to consider in the present proceedings whether on the evidence available two conclusions were possible and the appellate Court could have come to a conclusion different from the one it arrived at, and that if, on such consideration, the Commission found such eventuality possible that would be a mitigating factor for deciding the above two questions. In support of his above contention, he relied upon certain observations of the Commission in the opinion tendered by it in the case of Amar Nath Chawla reported in Election Law Reports Volume 58, Page 240.

9. I have no hesitation in rejecting this submission straightaway. Shri Desai himself conceded, and rightly so, that the findings of the Supreme Court are binding on all authorities, including the Commission in the present proceedings. It is, therefore, not open to the Commission to make any conjectures or surmises whether a different finding could have been arrived at by the Supreme Court on the evidence available to it. The reliance placed on Amar Nath Chawla's case is also misplaced. That was a case where Shri Chawla had already incurred disqualification for the full term of six years and the Commission was considering an application for removal or reduction of period of such disqualification. It is, therefore, not necessary to dilate on the submissions made by Shri Desai in his attempt to convince the Commission that a different conclusion was capable of being arrived at by the Supreme Court in its findings, particularly on the question whether Shri Gadakh believed the statement he made to be false or did not believe it to be true. The Supreme Court has already rejected the submissions to that effect made by Shri Desai, who appeared for Shri Gadakh in the appeal proceedings also, as ingenious arguments but suffering from fallacy.

10. Shri Desai next submitted that there were three mitigating circumstances in favour of Shri Gadakh, namely, (i) that the corrupt practice of which Shri Gadakh has been found guilty was

not of such grave nature as may call for a severe or deterrent punishment, (ii) that Shri Gadakh had already suffered sufficiently for the lapse on his part inasmuch as his election as a member of the House of the People has been set aside, and (iii) that Shri Gadakh had a distinguished political career and it would be very harsh if his career was cut short or interrupted by introducing a break of any length in his political life. He, therefore, urged that no disqualification may be imposed on Shri Gadakh if any disqualification was to be imposed at all that should be very minimum.

11. Shri Desai submitted that the Bombay High Court had found Shri Gadakh guilty of corrupt practices on seven counts, but, on appeal, the Supreme Court had ultimately found him guilty only on one count, viz., that Shri Gadakh made a false statement of fact that Shri Vikhe Patil had paid Rs. twenty lakhs to Shri B. G. Kolse Patil for withdrawing his candidature from Ahemednagar Parliamentary constituency and shifting to Beed Parliamentary constituency. According to Shri Desai, this statement was made by Shri Gadakh in 'hurly burly' of electoral campaign and that leeway should be given to adverse criticism of political opponents even though expressed in strong language. For his above proposition, he relied upon the decisions of the Supreme Court in the cases of Kultar Singh vs. Mukhtiar Singh [1964 (7) SCR 790], M J Zakharia Sait vs. T.M. Mohammed and others [1990 (3) SCC 396], Lalit Kishor vs. Jagdish Prasad Thada [1990 (Supp) SCC 248], Ramchand vs. Hardayal [1986 (1) SCR 177], Dev Kanta Barooah vs. Golok Chand Baruah and others [AIR 1970 SC 1231 and Jagdev Singh vs. Partap Singh [1954 (6) SCR 750].

12. The above submission has only to be stated to be rejected. Adverse criticism of political opponents so long as it does not transgress the limits of decency and does not offend any particular provision of law may not be objected to and visited with penalty in every case. But character assassination of the political opponents is entirely a different matter. Any attempt at character assassination must be looked down upon and put down with a heavy hand. In the present case, the false statement made by Shri Gadakh was not an adverse criticism of his poliitcial opponent, Shri Vikhe Patil but amounted to his character assassination. What Shri Gadakh stated, if properly analysed, was that Shri Vikhe Patil gave illegal gratification to the tune of Rs. twenty lakhs to secure the withdrawal of Shri B. G. Kolse Patil from the Ahmednagar Parliamentary constituency to further the prospects of his election from that constituency. Not only that, he also by the same statement, assailed, by necessary implication, the character of Shri B. G. Kolse Patil as a person who obtained or accepted illegal gratification from Shri Vikhe Patil for withdrawing from the contest in favour of the latter. Such acts on the part of the candidates cannot and should not be countenanced even in the so-called 'hurly burly' of election campaigns if the purity of the electoral process is to be maintained and saved from being sullied.

13. The above-referred decisions of the Supreme Court relied upon by Shri Desai also do not support the case advocated by him. In all those cases, what the Supreme Court was considering was whether the corrupt practice as alleged had been committed by the returned candidate or not. In the present case, the Supreme Court has clearly held that Shri Gadakh is guilty of corrupt practice.

14. In view of the above, I am not able to persuade myself to agree to the submission of Shri Desai that Shri Gadakh may not be disqualified. The declaration of his election as void cannot be considered to be sufficient and adequate punishment for the wrong done by him. He ought to be disqualified; on this, there cannot be any quarrel.

15. The moot question is for what period should Sri Gadakh be disqualified in the facts and circumstances of this case.

16. Shri Desai submitted that if any disqualification was to be imposed upon Shri Gadakh it should be minimum having regard to the gravity of the corrupt practice committed by him. His submission was that section 123 of the 1951-Act covered the whole gamut of corrupt practices, of which some, e.g., those defined in sub-sections (3) and (3A) relating to appeals or creating disharmony on grounds of religion, etc., are far more grave and heinous in nature than others, to wit, the present corrupt under sub-section (4), and that all cases of corrupt practices under section 123 should not be treated alike while determining the quantum of punishment. He relied upon the 'doctrine of proportionality' as propounded by the Supreme Court in the case of Ranjit Thakur vs. Union of India [1987 (4) SCC 611] and Ex. Malik Sardar Singh vs. Union of India and others [AIR 1992 SC 417].

17. There cannot be two opinions that the punishment imposed for any offence must be commensurate with the gravity of the offence. It should neither be excessively harsh and so disproportionate that it may look arbitrary and vindictive, nor should it be so minimal that the very object of imposition of the punishment may be defeated or frustrated. In the words of the Supreme Court in the case of Ranjit Thakur (supra), 'the sentence has to suit the offence and the offender'.

18. Having due regard to the nature and gravity of the corrupt practice committed by Shri Gadakh and his past political career, I am of the

considered opinion that Shri Gadakh does deserve a somewhat lenient view and he may not be visited with the maximum punishment, i.e., disqualification for six years as enivsaged under the proviso to section 8(1) of the 1951-Act. The ends of justice would be fully served if he is disqualified for a period of four years from the 19th November, 1993, i.e., the date of the Supreme Court's order finding him guilty of corrupt practice and vacating the stay order granted by it earlier against the judgement and order dated 30-3-1993 on the Bombay High Court.

19. Accordingly, the Election Commission hereby decides, and tenders its opnion to the President, under section 8(3) of the Representation of the People Act, 1951, that Shri Gadakh Yashing chosen as, and for being, a member of either House of Parliament or of the Legislative Assembly or Legislative Council of a State for a period of four years from the date of the Supreme Court's order, i.e., 19-1-1993.

T. N. SESHAN

Chief Election Commissioner of India

AND

Chairman, Election Commission of India

[No. 7(28)|94-Leg. II]

P. L. SAKARWAL, Jt. Secy.

New Delhi,

Dated the 16th May, 1994.

Printed by the Manager, Govt. of India Press, Ring Road, Maya Puri, New Delhi-110064
and Published by the Controller of Publications, Delhi-110054, 1994